निष्कर्ष और सुझाव

5 .1 निष्कर्ष

5.2 सुझाव

5.1 निष्कर्ष :

प्रकारान्तर से कहा जा सकता है कि स्वतन्त्र पत्रकार पी. साईनाथ इस पीढ़ी के उन गिने -चुने पत्रकारों में से हैं जिन्होंने ग्रामीण परिवेश में गरीबी, शोषण, भुखमरी, समाज के दलित और उत्पीडित वर्ग पर होने वाले अत्याचार तथा नयी आर्थिक नीति, उदारीकरण एवं औद्योगीकरण के फलस्वरूप आम आदमी पर पड़नेवाले दुष्प्रभावों को ही अपनी पत्रकारिता का विषय बनाया और हर तरह का जोखिम उठाते हुए इन मुद्दों पर लगातार लिखते रहे . अत्यंत विषम परिस्थितियों में उन्होंने देश के निर्धनतम गाँवों की यात्रा की और अपनी रपटों के जरिए पाठकों को बताया कि विकास के नाम पर किस तरह नौकरशाही और गाँव का एक सुविधासम्पन्न वर्ग आपसी साठ-गांठ के जरिए जनता को दिनोदिन कंगाल बनाता जा रहा है .इन विषयों को उन्होंने पत्रकारिता करते हुए बहुतेरे बार टाइम्स ऑफ इंडिया तथा द हिन्दू में उठाया . यह भारतीय सन्दर्भ के लिए ग्रामीण तथा विकास पत्रकारिता को नई दिशा देने वाला साबित हो सकता है .अस्तु , यह भी माना जा रहा है कि इस तरह कि पत्रकारीय दृष्टि इन दिनों मुख्यधारा की पत्रकारिता के लिए कोई महत्व नही रखती है .

1957 में मद्रास में जन्मे पी. साईनाथ ने दिल्ली के जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की और फिर लगभग दस वर्षों तक साप्ताहिक 'ब्लिट्ज ' से जुड़े रहे . 1993 में उन्हें टाइम्स ऑफ इंडिया फेलोशिप प्राप्त हुई और इस फेलोशिप के अंतर्गत उन्होंने देश के 9 निर्धनतम जिलों की रिपोर्टिंग की जिनका संकलित रूप उनकी बहुचर्चित पुस्तक 'एवरीबॉडी लब्ज ऐ गुड ड्राउट'है . इस पुस्तक का अब तक अनेक भाषाओँ में अनुवाद हो चुका है और ब्रिटेन, कनाडा तथा आस्ट्रेलिया सहित दुनिया के 30 विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता के पाठ्यक्रम में इसे शामिल किया गया है .

इस रिसर्च में पाया कि अपनी रपटों में वे इस बारे में बताते है कि इसके पीछे उद्देश्य यह था कि उन स्थितियों को प्रक्रियाओं के सन्दर्भ में देखा जाए . प्राय: गरीबी और वंचनाओं के बारे में इस तरह लिखा जाता है गोया ये घटनाएं हों . कहने का मतलब यह कि जब कोई आपदा आती है या जब लोग मारे जाते हैं तभी इन पर निगाह जाती है . भूखमरी से होने वाली मौतों अथवा लगभग अकाल जैसी स्थितियों से भी कहीं बढ़-चढकर गरीबी की विकरालता है . इनमे से कुछ की विकरालता अलग-अलग क्षेत्रों, अलग-अलग समाजों, अलग-अलग संस्कृतियों के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है . लेकिन इनके मूल में जो कारक हैं वे काफी हद तक एकल जैसे हैं इन कारकों में महज आय और कैलोरी ग्रहण करने की मात्रा ही शामिल नहीं है . इनके अलावा भूमि, स्वास्थ्य, शिक्षा, साक्षरता, बाल -

मृत्युदर और आम तौर पर मृत्युदर जैसे भी अन्य कारक हैं . कर्ज, परिसम्पत्तियां, सिंचाई, पेयजल, स्वच्छता और नौकरी आदि की स्थितियां भी अपनी-अपनी भूमिकाएँ निभाती हैं .

इस रिसर्च से पता चलता है , हो सकता है कि भारत की समस्या सोमालिया अथवा इथियोपिया जैसे संकटों से भिन्न है. यहाँ भूख का मामला कहीं अधिक जटिल है .यह भी गरीबी का एक पहलू है. यहाँ भूख का स्तर अपेक्षाकृत काफी कम है, या कम दिखाई देता है और ऐसी स्थिति नहीं है जैसे सोमालिया और इथियोपिया की तरह टेलीविज़न पर लम्बे चौड़े दृश्यों में दिखाया जा सके. ऐसे स्थिति में प्रक्रिया की रिपोर्टिंग और भी ज्यादा चुनौतीपूर्ण तथा महत्वपूर्ण हो जाती है. ऐसे अनेक है जो भुखमरी के शिकार नहीं है लेकिन जिन्हें बहुत कम पोषक प्राप्त है. ऐसे बच्चे दिखाई देंगे जो अपनी जरुरत से बहुत कम खाना पते है लेकिन ऊपरी तौर पर बिलकुल सामान्य दिखाई देते है. फिर भी पोषक की मात्रा कम होने से मानसिक और शारीरिक विकास को आघात पहुँचता है जिसका प्रभाव उन्हें जीवन भर झेलने पड़ सकता है. गाँवो में रहने वाले लाखो करोडो गरीब लोंगो को स्वस्थ्य और सिक्षा की कौन से सुविधा उपलब्ध है? क्यूँ वे उन्ही अधिकारीयों और उपलब्धियों का लाभ उठा पते है जो अन्य भारतीयों को सुलभ है? अगर ऐसा नहीं है तो वह कौन सी चीज़ है जो उन्हें ऐसा करने से रोकती है? गरीबी को पलने पोसने और बनाये रखने में सहायक शोषण के विभिन्न रूपों पर प्रायः एक सरकारी निगाह डाल दी जाती है.

लगभग तीन वर्ष पूर्व योजना द्वारा गठित एक विशेषज्ञ समूह ने गरीबों के अनुपात और उनकी संख्या का आकलन शीर्षक अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की . इस समूह में भारत के अनेक प्रमुख अर्थशास्त्री थे और इन्होने गरीबी के आकलन के सिलसिले में आयोग द्वारा अपनाएं जा रहें तरीकों में तब्दाली लेन की सिफारिश की थी. उन्होंने अपनी रिपोर्ट में बताया था कि गरीबी रेखा से नीचे ज़िन्दगी गुजारने वाले लोगों की संख्या 31 करोड़ 20 लाख हैं. कहा जा सकता है कि यह कुल आबादी का लगभग का लगभग 39 % है. बाद में इस समूह के अलावा कराये गए एक अन्य सर्वेक्षण में बताया गया की आधिकारिक तौर पर गरीबी रेखा से नीचे रहने वालों की संख्या 1993-94 में घाट कर कुल आबादी में 19 प्रतिशत रह गई है. इस सत्य तक पहुचने के लिए एक योजना आयोग ने आंशिक तौर पर गड़ना करने की उसी पुरानी पड़ती पद्धति का सहारा लिया था जो बदनाम हो चुकी थी. इस प्रक्रिया में इसने खुद अपने ही विशेषज्ञ समूह के सुझावों को दरकिनार कर दिया.

मजे की बात यह है की इसी भारत सरकार ने कोपेनहेगन में सामाजिक विकास से संभंधित विशव सम्मलेन में एक अजीब सी बात कही और वह भी तब जब देश में गरीबों में आई कमी की घोषणा किये नौ महीने से भी कम समाये गुजरा था. एक समेल्लन में इसने एक दस्तावेज प्रस्तुत किया जिसमे कहा गया था की 39.9 प्रतिशत भारतीय

गरीबी रेखा से नीचे से नीचे जीवें बसर कर रहें है. दरअसल इसका मकसद दानदाताओं से पैसे उगाहना था. आप जितना ही गरीब होंगे आपको उतना ही ज्यादा पैसे मिलेंगे. बाद में अभी 300 दिन भी नहीं बीते थे कि इसने देश के अन्दर फिर वही 19 प्रतिशत वाला उलझन में है .

उस बहस के महत्व को स्वीकार करते हुए उसके काफी अंश को शामिल कर लिया है . इसके पीछे उद्देश संख्या पर नहीं बल्कि लोगो पर ध्यान केन्द्रित कारण था. इससे यह नहीं समझना चाहिए कि दोनों के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है. इस प्रक्रिया में में जिन लोगों का उल्लेख किया गया है वो अन्य अनेक जिलो में रह रहे लाखो करोडो अन्य भारतीयों की तरह है. भारत में रहने वाले गरीबों में से लगभग 40 प्रतिशत भूमिहीन खेतिहर मजदूर है. अन्य 45 प्रतिशत छोटे या सीमित किसान है. शेष 7.5 प्रतिशत ग्रामीण शिल्पी है. अन्य से बाकि आबादी का हिस्सा बनता है. जिन जिलों की मैंने यात्रा की उनमे से अधिकांश लोग पहले दोनों समूह के अंतर्गत आते है.

इस स्वामी विवेकानंद ने एक बार भारतीयों अभिजात वर्ग के उस कौशल की चर्चा की थी जिसके अंतर्गत वे घंटो तक इस बात पर बहस कर सकते थे कि पानी के गिलास को बाएं हाँथ से पकड़ना चाहिए या दायें हांथो से. इस शोध में इस प्रवत्ति से बचना चाहता था. इसलिए मेरा पूरा ध्यान लोगों पर और उनकी समस्याओं पर केन्द्रित रहा.

अधिकांश इन जिलों का उस समय दौरा किया जब खेती का मौसम नहीं था. दिमाग में प्रायः यह सवाल उठा करता था की उन 200-240 दिनों में गावों के गरीब क्या करते है जब इलाके में खेतीबारी नहीं होती है? वे किस तरह अपनी जिंदगी गुजारते है? जिन्दा रहने का उनके पास कौन सा तरीका है? इस दौरान उन्हें किस तरह का काम मिलता है?

बकौल पी.साईनाथ , इन सवालों के जवाबों ने मुझे उन दस जिलों से भी आगे जाने को प्रेरित किया जिन्हें मैंने शुरू में अध्यन का विषय तय किया था. इन इलाकों में से अधिकांश में आबादी का एक बहुत बड़ा हिस्सा फसल काटने के साथ ही किसी दुसरे इलाके में चला जहा था. प्रायः वे अपने साथ अपने परिवार के सदस्य को भी ले जाते थे. इसिला मैंने पहले से निर्धारित जिलों के अलावा उन जिलों की भी यात्रायें की जहाँ ये प्रवासी मजदूर जाकर रह रहें थे. यात्रा की समाप्ति पर मैंने पाया की मै देश के सात राज्यों में लगभग 80 हज़ार किलोमीटर घूम चूका था. इस पुस्तक में जो 68 रिपोर्ट है वे अधिकांश आठ जिलों से ही सम्बंधित है जिन पर मैंने खुद को केन्द्रित किया था. ये जिले है तमिलनाडु में रामनाद और पुदुकोटई , बिहार में गोड्डा और पलामू, उड़ीसा में मलकानगिरी और नवापारा तथा मध्यप्रदेश में सरगुजा और झाबुआ. पुराने कोरापुट और कालाहांडी की भी कुछ रिपोर्ट है और ये दोनों जिले उड़ीसा में

है. इस परियोजना के शुरू के सवा साल के दौरान प्रत्येक जिलों के गावों में उन्होंने लगभग एक महीने का समय बिताया. कुछ मामलों में मै एकाधिक बार उन्ही जिलों में वापस आया. जिलों का चयन करते समय उन्होंने इस बात को आधार बनाया था : 1992 में आधिकारिक गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का अलग अलग राज्यों के हिसाब से जो प्रतिशत निकला गया था वह अब कोई प्रस्थान बिंदु नहीं रह गया था. उसी सूची में सबसे बुरी हालत में पांच राज्य थे. नीचे से अगर देखे तो इनका क्रम इस प्रकार था- उड़ीसा , बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और तमिलनाडु. प्रत्येक राज्य में सबसे बुरी हालत वाले दो जिलो का चयन करना कोई कठिन कम नहीं था. आम तौर पर सरकारी तथा स्वतंत्र विशेषज्ञ दोनों इस बात पर सहमत थे की सबसे बुरी हालत में रहने वाले कौन से जिले है. अपने चयन को और पुख्ता करने के लिए इन जिलो के बीस से भी ज्यादा संकेतको की जाँच की जिनमे बाल मृत्यु दर से लेकर सिंचाई सुविधा तक शामिल है.

शोध का प्रतिफल बताता है कि शुरू में ही इन पारंपरिक विषयों के अनुसार अलग अलग हिस्सों में बाँटने की कोशिश की : जमीन, पानी, जंगल, जनजातियाँ, दलित,महिलाये ,विकास आदि आदि. लेकिन ऐसा हो नहीं सका. लगभग सभी रिपोर्टो में इनमे से कुछ अन्य अधिकांश चीज़े शामिल थी. आप किस तरह भूमि से संभंधित मसलो का कोई अलग हिस्सा तैयार कर सकते है जबकि यह मसला 40 रिपोर्टो में शामिल हो ? इसलिए इसकी बजाये स्वस्थ और शिक्षा पर अलग खंड तैयार किये गए. इसी प्रकार जिंदगी जीने की रणनीति पर. सूदखोरी और ग्रामीण ऋण व्यवस्था तथा अपराध पर, सूखे पर ,विस्थापन पर. गाँव के चरित्र पर. और इस मुद्दे पर की इन स्थानों में गरीब लोग किस तरह गरीबी और उत्पीरण के खिलाफ संघर्ष कर रहे है. ऐसा करते समय भी एक दुसरे के क्षेत्र में विषयों के प्रवेश के पहुचने के खतरे से बचाना मुश्किल था.

यह सारे रिपोर्ट गाँव या जिले पर ही केन्द्रित है. बावजूद इसके इन रिपोर्टो में जिन मुद्दों पर विचार किया गया है वे राष्ट्रीय स्तर के है. इसके कुछ हिस्सों की शुरुआत राष्ट्रीय परिद्रश्य पर एक संक्षिप्त टिपण्णी के प्रयास के साथ हुई है. मिसाल के तौर पर स्वस्थ से सम्बंधित खंड में विभिन्न गावो की तीन रिपोर्टे है. इसमें भारत में जन स्वस्थ से सम्बंधित कुछ महत्वपूर्ण जानकारी और आंकडे मिल जायेंगे. यही बात कुछ अन्य हिस्सों पर भी लागू है.

इस शोध में जिन लोगों की चर्चा है वे भारतीय समाज के एक विशाल हिस्से का प्रतिनिधित्व करते है. यह हिस्सा उन दस प्रतिशत लोगों से, जो उनकी जिंदगी चलते है , कई कई गुणा अधिक है. लेकिन यह ऐसा हिस्सा है जो अभिजात वर्ग की निगाहों से ओझल रहता है. उस प्रेस और मीडिया की निगाहों से भी वह परे रहता है जो उन्हें जोड़ने में प्रायः विफल साबित हुआ है.

पी. साईनाथ जनपक्षीय पत्रकारिता करने वालों के लिए एक अनुकरणीय और आदर्श उदाहरण है . इस शोध विषय पर इन्ही तथ्यों के अन्वेषण का प्रयास किया गया है .

इस शोध अध्ययन का समेकित निष्कर्ष है पी . साइनाथ कि पत्रकारिता के परिद्रश्य में यहाँ आपको गरीबी पर वः संवाद मिलेगा जिसे देश की नौकरशाही कभी मानने को तैयार नहीं हो सकती .रिसर्च 'तीसरी फसल 'नौकरशाही द्वारा पेश किए गए आंकडों के कुहासे को चीरती हुए भारतीय गांवों के लाखो-करोडों लोगों की व्यथा को सामने लाती है . अत्यंत सरल और सीधी सपाट भाषा में लिखी गई यह पुस्तक और विभिन्न रिपोर्टे विषाद और व्यंग से भरी है . और विशेषज्ञों की सुघड़ शब्दावली का मखौल उड़ाती है . इन सबके बावजूद टाइम्स आफ इंडिया के तत्कालीन स्थानीय सम्पादक डैरियल डेमोंट के शब्दों में कहें तो इसकी विषय वस्तु साधारण पाठक से लेकर अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियो और योजना निर्माताओं सबके लिए समान रूप से महत्वपूर्ण है . साईंनाथ ने कुछ ख़ास उद्देश्यों से भरपूर इस परियोजना पर जिस ढंग से काम किया और इसके लिए उन्होंने जो एक सर्वथा अनूठी और नई पद्यति विकसित की वह निश्चय ही लीक से हट कर है .

इन रिपोर्टो में दूरदराज के अंचलों की 68 रिपोर्ट , विषय से सम्बन्धित 10 लेख और 29 तस्वीरें हैं . इसमे सूखे का चित्रण है , मौन भूख का विवरण है , अदृश्य सूदखोरी की कहानी है लेकिन साथ ही गरीबों ने अपने का जिन्दा रखने की जो अजीबोगरीब रणनीति तैयार की है उसका भी अनूठा चित्रण है . इसमे आपको बेहद वंचित लोगों की, शोषण के अविश्वसनीय तन्त्र की और बड़े पैमाने पर सरकारी नीतियों की किलता की दास्ताँ मिलेगी . आप पाएगें कि किस तरह पर्यावरण का विनाश हो रहा है, शिक्षा व्यवस्था टूटती जा रही है और स्वास्थ्य प्रणाली चरमरा गई है फिर भी आपकी ऐसे चेहरे दिखाई देंगे जो एक बेहतर जिन्दगी के लिए भरपूर सम्मान के साथ संघर्ष कर रहे हैं .

वर्तमान समय में चर्चित शब्द है 'भूमंडलीकरण' जो आर्थिक संकल्पना और पूजी आधारित विश्व् अर्थव्यवस्था को सूचित करता है. भूमंडलीकरण को वैश्वीकरण, विश्वायन उदारीकरण,ग्लोब्लाएजेशन आदि नामों से भी अभिहित किया जाता है भूमंडलीकरण 'एकीकरण' की विशेषता लिए संसार को एक करने की दृष्टि से, पूरी तरह युक्त है मूलरूप से भूमंडलीकरण का उद्देश्य केवल व्यापार के द्वारा दुनिया को एकीकृत करना है बाकि अन्य बातें दूसरी पंक्ति में आती हैं. भूमंडलीकरण पुरे विश्व में कोई अचानक घटित होने वाली घटना नहीं है बल्कि यह एक प्रक्रिया है जो लम्बे समय से आकर ग्रहण करती आ रही है .

पी साइनाथ का मानना है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद भूमंडलीकरण का आगमन भारत में सन1991 में. तब हुआ जब पी. बी. नरसिम्हा राव ने मुक्त बाजार व्यवस्था को लागू किया जिसमे विदेशी पूंजी निवेश, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों परबन्धनों में ढील और निजीकरण आदि तत्व लागू हुए . पी. साईंनाथ मानते है भूमण्डलीकरण केवल आर्थिक

संकल्पना सम्बन्धी प्रक्रिया मात्र नहीं है बल्कि यह एक विस्तृत स्वरूप धारण करती हुई प्रक्रिया है . भूमंडलीकरण समाज, विज्ञान, राजनीति, पत्रकारिता आदि सभी को नवीं रूप में प्रस्तुत अथवा पुन: परिभाषित करने को विवश करता है .

यह ग्लोबल पूंजी, ग्लोबल बाजार और आधुनिकीकरण की दबाव समाज के प्रत्येक क्षेत्र में दिखाई पड़ने लगा है और हिंदी पत्रकारिता भी इससे इतर नही है बल्कि उसे भी बाजार में बने रहने के लिए कहीं न कहीं इसी प्रक्रिया (भूमंडलीकरण) का सहारा लेना पड़ रहा है जिसका पत्रकारिता और समाज पर प्रभाव साफ दृष्टिगोचर होता है . समाचार पत्र-पत्रिकाएं , इलेक्ट्रॉनिक पत्रकारिता, मल्टीमीडिया पत्रकारिता, संस्थान आदि सभी अपने पैटर्न , प्रस्तुतिकरण, तकनीक आदि की लेकर अधिकाधिक ग्लोबल होने की प्रक्रिया में प्रयासरत हैं . आज पत्रकारिता में भूमंडलीकरण के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह के प्रभाव पड़ रहे हैं . पहले जहाँ 'समाचार' संदेश या लोकहित के सन्दर्भ में प्रस्तुत होता था, वहीं आज समाचार एक प्रोडक्ट (उत्पाद) की तरह प्रस्तुत हो रहा है, जिसका प्रसारित और प्रकाशित होना उसके प्राइज वैल्यू (मार्किट वैल्यू) पर निर्भर करता है . 1

5.2 सुझाव

समकालीन पत्रकारिता में भूमंडलीकरण को लेकर विद्वान निरंतर विमर्श करते रहे हैं . इसलिए अध्ययन के परिवेश को सम्पन्न करने के लिए पी साईनाथ की पत्रकारिता को पढना अपरिहार्य हो जाता है . भूमंडलीकरण अथवा वैश्वीकरण को लेकर बौद्धिक वर्ग द्वारा पहले भी विमर्श, पुस्तकें आदि बाजार में प्रकाशित होते रहे हैं , जिनमे प्रो. रामशरण जोशी की 'मीडिया और बाजारवाद', अभय दुबे की 'भारत में भूमंडलीकरण ' और जवाहर कौल द्वारा रचित 'हिंदी पत्रकारिता के बाजार भाव' आदि की रचनाएँ बाजार में उपलब्ध हैं जिनमें पत्रकारिता के अन्तर्विरोधों और चुनौतियों को चिन्हित किया गया . 'पल-प्रतिपल' पत्रिका में अजय कुमार सिंह का 'वैश्वीकरण शिक्षा और स्थानीय' ब्रज कुमार पाण्डेय का 'भूमंडलीकरण बाजार और संस्कृति' सुधीश पचौरी का 'पूंजी और प्रेस' आदि लेख भूमंडलीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न समस्याओं और चिंताओं का साक्षात्कर कराते है .

वस्तुतः, पी .साईनाथ की दृष्टि में पत्रकारिता, हिंदी इलेक्ट्रानिक पत्रकरिता , मल्टीमीडिया पत्रकारिता एक कार्पोरेट की तरह उभर रहा है . आर्थिक उदारीकरण के चलते मीडिया का नया स्वरूप हमारे सामने आ रहा है. इस विषय पर कोई शोध कार्य मेरे संज्ञान में नही आया है . 'पी साईनाथ की पत्रकारीय दृष्टि: उपयोगिता एवं प्रासंगिकता' नामक शोध प्रबंध में पत्रकारिता को केंद्र में रखकर अध्ययन किया गया है , जिसमें भूमंडलीकरण, पत्रकारिता से सम्बन्धित लेख, विमर्श, समीक्षा आदि को इसमे समाहित करने का किंचित प्रयास किया है .वस्तुतः , पालागम्मी साईनाथ् ऐसे भारतीय पत्रकार हैं जिन्होंने अपनी पत्रकारिता को सामाजिक समस्याओं, ग्रामीण हालातों, गरीबी, किसान समस्या और भारत पर वैश्वीकरण के घातक प्रभावों पर केंद्रित किया है . वे स्वयं को ग्रामीण संवाददाता या केवल संवाददाता कहलवाना पसंद करते है . वे अंग्रेजी अखबार द हिंदू और द वेवसाइट इंडिया के ग्रामीण मामलों के संपादक रहे हैं . हिंदू

में पिछले कई वर्षों से वे अपने महत्वपूर्ण विषयों पर लिखते रहे हैं . अमर्त्य सेन ने उन्हें अकाल और भूखमरी के विश्व के महानतम विशेषज्ञों में से एक माना है

इस रिसर्च के उपरांत मेरा मानना है कि पिछले 20 वर्षों में मीडिया का सबसे ज़्यादा बाज़ारीकरण हुआ है . मीडिया को जहां से पैसा मिलता है वह वहीं पर फ़ोकस करता है .आज एक भी संवाददाता श्रमिकों, मजदूरों के लिए नहीं है, रोज़गार बीट को कोई कवर ही नहीं करता . भारत के कानून और व्यवस्था की स्थिति पर : उच्च न्यायालय के सारे न्यायाध्यक्षो के पास एक अकेले पुलिस कांस्टेबल की ताकत नहीं हैं। वह कांस्टेबल हमें बनाता है या तोड़ता है . न्यायाध्यक्ष कानून को फिर से नहीं लिख सकते और उन्हें दोनों पक्षों के शिक्षित वकीलों को सुनना पड़ता हैं .यहाँ कांस्टेबल सरलता से खुद के कानून बना लेता है .वह लगभग कुछ भी कर सकता है। जब राज्य और समाज उसे आँख मारती है, तो वह अधिकतर कर सकता है .

इस शोध का सार यही है कि पी . साईनाथ के मुताबिक भारत में एक सख्त एंटी मोनोपोली क़ानून होना चाहिए . ऐसा लेजिस्लेशन सिर्फ नेगेटिव नहीं होना चाहिए . एक पॉजिटिव लेजिस्लेशन होना चाहिए जो भारतीय मीडिया में डाइवर्सिटी बढ़ा सकता हैं–गुजरात के तत्कालीन मुख्य मंत्री नरेंद्र मोदी पर : साईनाथ ने मोदी के ख्याति और गुजरात के मॉडल को "हमारे समय के सबसे बड़े सार्वजनिक संबंधों का धोखा " कहा है . उनके अनुसार, मोदी एक निगमित दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं .

पी. साईनाथ का मानना है कि मीडिया का ध्यान "खबर" से "मनोरंजन " तक बढ रहा है और शहरी अभिजात वर्ग के उपभोक्तावाद और जीवन शैली को अखबारो में प्रमुखता मिली है जो भारतीय मीडिया में शायद ही कभी भारत में गरीबी की हकीकत की खब्रर लेकर आई है . "मुझे लगता है कि अगर भारतीय प्रेस ने पांच प्रतिशत को कवर किया है, तो मुझे नीचे के पांच प्रतिशत को कवर करना चहिए" . साईनाथ ने कहा . 19 93 में साईनाथ ने भारत फैलोशिप के एक टाइम्स के लिए आवेदन दिया था . साक्षात्कार में उन्होने ग्रामीण भारत से रिपोर्ट करने के लिए अपनी योजनाओ के बारे में कहा . जब एक सम्पाद्क ने उससे पूछा कि "मान लीजिए कि मेरे पाठ्क, इन सब चीज़ो मे दिलचस्पी नही लेते है" तब साईनाथ ने कहा कि "आप पिछले बार अपने पाठ्को से कब मिले थे कि उनकी ओर से इस तरह का दावा कर रहे है?" . यह एक तरह से समकालीन सन्दर्भ को परिभाषित करने का उपक्रम है . जो विभिन्न पत्रकारिता संस्थानों के लिए लिए मार्गदर्शी सिद्धांत हो सकते हैं .